IJAER/June-July 2013 /Volume-02/Issue 4 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Researc

प्रगतिशील कविता और शमशेर बहादुर सिंह का योगदान

दामोदर लाल मीना

व्याख्याता हिन्दी राजकीय महाविद्यालय

गंगापुर सिटी राजस्थान

सार

शमशेर बहादुर सिंह हिंदी साहित्य में एक जटिल नाम उन लोगों के लिए हैं जो एक किताब या महज कुछ कविताओं से किसी कवि को समझने की कोशिश करते हैं। कविता के सच को शब्दों के साथ स्वीकार करने वाले लोगों के लिए शमशेर कवियों के भी कवि कहलाते हैं। डॉ. रंजना अरगड़े की किताब श्कवियों के कवि शमशेरश में पहली ही पंक्ति में लिखा है कि शमशेर अत्यंत जटिल काव्य संवेदन और सूक्ष्म शिल्प–संभार वाले श्रेष्ठ और विशिष्ट कवि हैं। वास्तव में शमशेर के संपूर्ण साहित्य का आकलन अभी पूरी तरह से नहीं किया गया है।

उनकी चर्चा साहित्य जगत में होती रही है लेकिन उन पर गहन कार्य नहीं हुआ। दरअसल शमशेर बहादुर हिंदी कविता के आत्मीय और दुरूह कवि माने जाते हैं। उनकी संवेदना का आकाश सचमुच में असीम है। शमशेर की कविताएं जितनी पढ़ी जाएंगी उनका उतना ही सार सामने आता जाएगा। जो जितना जटिल होता है वह समझने पर उतना ही सरल हो जाता है। शमशेर प्रगतिवाद और प्रतीकवाद के समन्वि त मापदंडों से बाहर नहीं हैं। वह साम्यवाद से भी दूर नहीं हैं। उनकी कविताओं में समकालीन देश और वातावरण का समुचित संयोजन है।

शमशेर की कविताओं को पढ़ने के पहले वैसी रुढ़ियों से मुक्ति आवश्यक है जो तथाकथित काव्य–आंदोलनों ने बना रखी हैं। इसलिए उनके काव्य–लोक में प्रवेश के लिए और उस संसार की सदस्यता प्राप्त करने के लिए किसी भी पाठक को शमशेर के मनोजगत, विचार के प्रति उनके दृष्टिकोण, संसार के प्रति उनकी दृ ष्टि तथा कविता के उनके व्यवहार को सावधानी से समझना जरूरी होगा। प्रायः हिंदी आलोचना ने यह दायित्व अब तक पूरा नहीं किया है. हालांकि शमशेर की श्रेष्ठता को सीधे–सीधे अस्वीकार करने का दुस्साहस भी एकाध को छोड़कर शायद ही किसी ने दिखाया हो। इसलिए हम शमशेर को पढ़ने का रास्ता उन्हीं की उंगली पकड़कर तय करेंगे और उस दरम्यान यह भी देखेंगे कि इस रास्ते से कई सुधी समीक्षक कैसे और क्यों भटक गए हैं।

भूमिका

कोई रचनाकार या कलाकार शमशेर बहादुर सिंह के लिए आकर्षक इसलिए होता है कि वह कोई ऐसी चीज पैदा कर रहा होता है जिससे हम जाने–अनजाने अपनी अनुभूतियों या अपने अनुभवों की तुलना करते चलते हैं। ऐसे कलाकार को समझने के अपने तरीके के बारे में उनका कहना है, चूंकि मेरी दिलचस्पी शैली और प्रकार में और तकनीक में रही है, तो अलग– अलग रचनाकारों की, कवियों की, आर्टिस्टों की जो शैलियाँ हैं उनमें भी रही है। मैं डिसकवर करना चाहता हूँ कि इस रचनाकार का जो एक लिविंग प्रिंसिपल है वह क्या है। यह उद्धरण खुद शमशेर को समझने के लिहाज से काफी महत्वपूर्ण और अर्थपूर्ण भी है। अक्सर रचनाकारों की विश्व–दृष्टि या विचारधारा की खोज की जाती है। इस विश्व–दृष्टि या विचारधारा की जगह शमशेर रचनाकार के लिविंग प्रिंसिपल को खोजने–समझने की जरूरत बताते हैं, जो यह एक सही रवैया लगता है।

रघुवीर सहाय को शमशेर ने जिंदगी में जिन तीन चीजों की बड़ी जरूरत बताई थी, उनमें एक था दृ मार्क्सवाद। एक इंटरव्यू में मार्क्सवाद से अपने रिश्ते को स्पष्ट करते हुए उन्होंने बताया है कि मार्क्सवाद से नजरिया बेहतर, वैज्ञानिक और विश्वसनीय होने के साथ–साथ दृष्टि में विस्तार मिलता है और विश्व–बंधुता का अहसास भी होता है। मार्क्सवाद से रचनाकार को दिशा मिलती है और उसकी वेदना में धार आ पाती है। लेकिन इसी मार्क्सवाद से शमशेर का रिश्ता हिंदी के आलोचकों के लिए खासा सिरदर्द बना रहा है।

प्रायः सबने अपनी मुश्किल किसी न किसी ढंग से बताई है और अपने–अपने हिसाब से उसका समाधान भी किया है, लेकिन उनकी चर्चा के पहले शमशेर की आरंभिक कविताओं के संकलन उदिता की भूमिका की ये पंक्तियाँ पठनीय हैं दृ ..अगर मेरी वाणी में इन्सान का दर्द है दृ छोटा सा दर्द सही, मगर सच्चा दर्द.. भावुकता, ललक, आकांक्षा, तड़प और आशा, कभी घोर रूप में निराशा भी लिए हुए, कभी उदासी, कभी–कभी उल्लास भी एक प्रेमी कलाकार, एक मध्यवर्गीय भावुक नागरिक का, जो मार्क्सवाद से रोशनी भी ले रहा है और सांस्कृतिक और धार्मिक विविध परंपराओं में अपनी नैसर्गिक शक्ति और ऊर्जा के स्रोत भी (अपनी सीमा में अपनी शक्ति भर तलाश रहा है, एक ऐसा व्यक्ति जिसको सभी देशों और साहित्यों से प्यार है और सबसे अपने दिल को जोड़ता है (प्रेम की भावुकता ने जो बीज बोया वह मैं देखता हूँ कि अकारथ नहीं गयाः क्योंकि पूरी मनुष्य जाति से प्रेम, युद्ध से नफरत और शांति की समस्याओं से दिलचस्पी दृ ये सब बातें उसी से धीरे–धीरे मेरे अंदर पैदा हुई..) लो, अगर उपर्युक्त तमाम सूत्रों के साथ इन्सान से जुड़ता हुँ, तो मेरे लिए फिलहाल इतना काफी है। यहाँ चिह्नित करने लायक शब्द हैं दृ सभी देशों और साहित्यों से प्यार, प्रेम की

भावुकता, पूरी मनुष्य जाति से प्रेम, युद्ध से नफरत और शांति की समस्याओं से दिलचस्पी और फिर इन सभी सूत्रों के साथ इन्सान से जुड़ने की कोशिश। ये कुछ ऐसे सूत्र हैं, जिनके माध्यम से शमशेर को समझा जा सकता है।

सबसे अधिक दिलचस्प है प्रेम की भावुकता को गौरव का स्थान दिया जाना। यह इसलिए कि आज भी मार्क्सवादी विचारक और रचनाकार अगर प्रेम को सम्मान देने को तैयार हो भी जाएँ, तो भावुकता को श्रेयस्कर मानने में उन्हें हिचकिचाहट बनी रहेगी। कम्युनिस्टों का प्रशिक्षण ही कुछ ऐसा होता है कि भावुक होने को वे कमजोर होने की निशानी मानते हैं। शमशेर भावुकता को वस्तुपरकता के साथ शत्रुतापूर्ण रिश्ते में नहीं रखते। प्रायः यह समझा जाता रहा है कि ठंडी वस्तुपरक दृष्टि अपनाने के लिए भावुकता से दूर रहना बहुत जरूरी है।

न प्रेम सीमित है, न ही उनकी भावुकता का दायरा तंग है। वे उन्हें क्रिस्टोफर काडवेल की तरह ही ग्रहण करते हैं, जिन्होंने प्रेम शीर्षक अपने निबंध में लिखा है कि सामाजिक संबंधों में विद्यमान भावात्मक तत्व को मनुष्य ने प्रेम का नाम दे दिया है। मार्क्सवादियों का विरोध पूँजीवाद से दरअसल इस वजह से होना चाहिए कि वह तमाम सामाजिक संबंधों को आर्थिक संबंधों में और उन्हें भी बाजार द्वारा तय किए गए संबंधों में बदलते हुए इस भावात्मक तत्व को जला डालता है।

काडवेल इस व्यवस्था के बारे में लिखते हैं, आज मानो प्रेम और आर्थिक संबंध दो विपरीत ध्रुवों पर जमा हो गए हैं।विलगाव एक भयंकर तनाव को जन्म देता है और यही बूर्जुआ समाज में व्यापक परिवर्तन की प्रक्रिया आरंभ कर देता है। भावना, जिसे जबर्दस्ती जमीन के अंदर गाड़ दिया गया है, जब विस्फोट के साथ बाहर आती है तो समाज का पूरा ढाँचा चकनाचूर हो जाता है। यही क्रांति है। शमशेर इसी क्रांति के मुरीद हैं। इसीलिए प्रेम की भावुकता उन्हें कमजोर करने की जगह इन्सानों के साथ सही रिश्ते कायम करने में मदद करती है।

अज्ञेय ने शमशेर के बारे में कहा है, शमशेर की कविता में निहित मूल्य–दृष्टि में और उनकी घोषित राजनीति में, राजनीतिक दृष्टि में, लगातार एक विरोध रहा है और अभी तक है। यह घोषित राजनीतिक दृष्टि मार्क्सवाद के अलावा और कुछ नहीं। पर इस संबंध में स्वयं कवि का विचार यह है दृ मार्क्सवाद को मैं सामाजिक, राजनैतिक पहलुओं से नहीं देखता, बल्कि हमारे युग में वह मानव के गहनतम चिंतनों से जुड़ा है। अतः मार्क्सवाद उनके लिए राजनीतिक दृष्टि–मात्र न होकर उनके रचनाकार व्यक्तित्व के निर्माण की आधारभूत सामग्री है।

दूसरा सप्तक के अपने वक्तव्य में उन्होंने कहा है कि यह कलाकार पर निर्भर करता है कि वह अपने चारों ओर बिखरे पड़े सुंदरता के खजाने का कितना इस्तेमाल कर सकता है। लेकिन कलाकार में यह क्षमता आए, इसके लिए जरूरी है कि वह अपने चारों तरफ की जिंदगी में दिलचस्पी ले, उसे ठीक–ठाक, यानी वैज्ञानिक आधार पर समझे। शमशेर के लिए यह वैज्ञानिक आधार मार्क्सवाद है।

मार्क्सवाद उन्हें अपनी अनुभूतियों और अनुभवों को सुलझाने में, उन्हें स्पष्ट करने में मदद करता है, जिससे उनकी कला–चेतना जग पाती है। इसी वक्तव्य में वे आगे लिखते हैं, इस तरह अपनी कला–चेतना को जगाना और उसकी मदद से जीवन की सच्चाई और सौंदर्य को अपनी कला में सजीव से सजीव रूप देते जाना रू इसी को मैं साधना समझता हूँ। और इसी में कलाकार का संघर्ष छिपा हुआ देखता हूँ। इस तरह, यह देखना कठिन नहीं है कि शमशेर के प्रशंसकों ने उनकी कवि–दृष्टि या कला–चेतना और मार्क्सवाद में जो भेद देखा था, वह स्वयं शमशेर के लिए कहीं भी मौजूद नहीं था।

मार्क्सवादी और गैर–मार्क्सवादी, दोनों ही तरह के आलोचकों ने और पाठकों ने भी प्रायः अज्ञेय की तरह ही शमशेर के अंदर मार्क्सवाद को लेकर द्वंद्व चलते हुए देखा है। यहाँ मुक्तिबोध को लेकर अब तक चली आ रही उलझन की याद आना स्वाभाविक है। शमशेर और मुक्तिबोध में कई स्तरों पर समानता है। कभी–कभी ऐसा लगने लगता है कि मुक्तिबोध को लेकर जो बहस थी, उसने अपनी परिणति प्राप्त कर ली है और यह अंततः हिंदी की प्रौढ़ आलोचना–दृष्टि के कारण ही संभव हो सका है। लेकिन अभी हाल में, शमशेर की मृत्यु के बाद उनकी स्मृति में सापेक्ष नामक पत्रिका का जो अंक निकला है, वह उसे गलत साबित कर देता है। मार्क्सवादी आलोचक डॉ..शिव कुमार मिश्र ने सुल्तान अहमद को दिए गए इंटरव्यू में यह विचार व्यक्त किया है दृ मुक्तिबोध की कविता में ऐसा कुछ है जो दूसरों को पार्टिक्यूलरली मार्क्सवाद के विरोधियों को यह गुंजाइश देता है कि वे उन्हें अपने ढंग से एनालाइज करके महान सिद्ध कर दें।

उनमें भी ऐसा तमाम कुछ है, जो उनकी मार्क्सवादी, प्रगतिशील, ह्यूमन, मानसिकता से मेल नहीं रखता। वह तमाम कुछ क्या है, जो प्रगतिशील, मानवीय मानसिकता के विरुद्ध है? पूरे इंटख्यू में शिवकुमार जी यह नहीं बताते। लेकिन वे यह जरूर कहते हैं कि शमशेर में मनुष्य, समाज, राष्ट्र और उनके भविष्य को लेकर गहरी चिंता का भाव हैय वे तमाम मानव– विरोधी शक्तियों के आजीवन खिलाफ रहेय वे सेक्यूलर–माइंडेउ ह्यूमन थेय वर्ण, जाति, धर्म और नस्ल जैसी संकीर्ण विचारधाराओं से बहुत दूर थेय मनुष्यता के बारे में, उसके सुख–दुख के बारे में, सामान्यजन के बारे में, निर्धन जनता के बारे में, मध्य वर्ग की आर्थिक बदहाली के बारे में उन्हें चिंताएँ थीं। यह सब कुछ कहने के बाद, शमशेर की संवेदना का दायरा बहुत विशाल देखने

के बाद भी शिवकुमार जी यह कहने को मजबूर हैं कि बहुत से ऐसे प्रभाव भी शमशेर पर रहे, जिनको एक सीमा तक रुग्ण भी कह सकते हैं। ये रुग्ण प्रभाव क्या हैं और उनके कौन–से लक्षण शमशेर में प्रकट होते हैं, इसे स्पष्ट करना शिवकुमार जी को जरूरी नहीं लगा।

प्रगतिशील कविता और शमशेर बहादुर सिंह का योगदान

कला या साहित्य के इतिहास से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि रचनाकार प्रायः विचारों के प्रति आकर्षित होता है, विचार–प्रणाली के प्रति नहीं। विचार प्रणाली या विचारधारा उसे हमेशा अपर्याप्त और बंधनकारी जान पड़ी है। दुनिया भर के रचनाकारों पर मार्क्सवाद का असर उसमें निहित समाजवाद के उस विचार के चलते हुआ, जिसमें आजादी, न्याय, मानवीयता दृ मनुष्य का स्वप्न और एक स्वप्न की भांति मनुष्यता निर्णयकारी तत्व है। रचनाकार का संघर्ष मनुष्य के अकेले होते जाने, उसके संवेदनहीन होते जाने, विकृत, अपाहिज होते जाने के विरुद्ध है। इसीलिए उस व्यवस्था के विरुद्ध भी है जो व्यक्ति को इन स्थितियों की ओर ज्यादा से ज्यादा ढकेलते जाती है, उसे और दबाती जाती है।

शमशेर पर रुग्ण प्रभाव देखने का यह रोग नया नहीं है, यह नई कविता और अस्तित्ववाद में संकलित डॉ.. रामविलास शर्मा के निबंध शमशेर बहादुर सिंह का आत्म–संघर्ष और उनकी कविता को पढ़ने से पता चलता है। शमशेर इलियट–पाउण्ड के प्रशंसक थे। डॉ.. शर्मा ने इस पर टिप्पणी की है कृ शमशेर यह कहकर अपने मन को समझा लेते थे कि इलियट–पाउण्ड की अस्वस्थ विषय–वस्तु से हमें क्या लेना–देना है, हम तो उनके शिल्प सराहते हैं।

वास्तव में बात थी इन अस्वस्थ कवियों के भाव–बोध पर मुग्ध होने की। उनका भाव–सौंदर्य उन्हें अपनी ओर खींचता था और उनका विवेक उन्हें फटकारता था कि यह सब व्यक्तिवादी प्रपंच है। अज्ञेय ने कवि की मूल्य–दृष्टि और उसकी घोषित राजनीति में विरोध देखा था। यहाँ डॉ.. शर्मा कवि के भाव–बोध और उसके विवेक में खींचतान देखते हैं। यह विवेक मार्क्सवाद ही है। विवेक (मार्क्सवादी) और भाव–बोध (अस्वस्थ व्यक्तिवादी) के बीच बंद मुक्तिबोध में भी था। पर डॉ.. शर्मा इन दोनों में फर्क यह पाते हैं कि जहाँ मुक्तिबोध में इसे लेकर काफी उलझन थी, वे तड़पते थे, अपने–आपसे लड़ते थे, लहूलुहान हो जाते थे, वहीं शमशेर सजीले जिस्म के गुनगुनाने पर रीझ कर रह जाते हैं, अंधेरे कुएँ या बावड़ी में उतरने की फुरसत उन्हें नहीं मिलती।

क्या संयोग है कि कुछ ऐसा ही द्वंद्व या संघर्ष डॉ.. रघुवंश को भी दिखलाई पड़ता हैवैचारिक स्तर पर शमशेर में एक विरोधाभास बना रहा है।व्यक्तित्व की प्रखर चेतना के साथ उसमें सामाजिक दायित्व का आग्रह भी है। इस प्रकार का आंतरिक द्वंद्व योरोप के तथा पश्चिम के ओडेन, स्पेण्डर, पाब्लो नेरूदा, लोर्का तथा आरेगा जैसे अनेक कवियों में पाया जाता है..परंतु जिनमें यह द्वंद्व वैयक्तिक चेतना और सामाजिक दायित्व की भावना का है, उनको शमशेर की तरह शुद्ध कवि–दृष्टि और प्रभावानुभव में पलायन की सुविधा नहीं मिल सकी।

सजीले जिस्म पर रीझकर रह जाने के रुग्ण स्वभाव के साथ यहाँ हमें शमशेर के पलायनवादी चरित्र का भी पता चलता है। रघुवंश जी की धारणा है कि कवि अपने इस अंतद्व का समुचित समाधान सर्जन के स्तर पर नहीं कर सका है। सापेक्ष के शमशेर अक में डॉ. रामविलास शर्मा अपनी तीन दशक पुरानी धारणा को दुहराते हुए अपनी बात को स्पष्ट करते हैं– शमशेर की रचनाओं में काव्य–कौशल को लेकर उधेड़बुन ज्यादा है। उनकी उलझनों का एक कारण यह है कि वे अपने रीतिवादी रुमानी सौंदर्य–बोध से अपने मार्क्सवादी विवेक की संगति नहीं बिठा पाए।

विवेक यानी मार्क्सवाद और भाव–बोध के बीच कोई अंतर खुद शमशेर महसूस करते थे या नहीं, और अगर करते थे तो उनका समाधान उन्होंने किस तरह किया कृ इस पर हम आगे चलकर विचार करेंगे। अभी हिंदी आलोचना में बिल्कुल ही अलग पद्धतियों और विश्वासों को लेकर चलने वाले चिंतकों के बीच इस मसले पर जो एकमत स्थापित हुआ है, भले ही उनके मकसद अलग–अलग हों, उसे ठीक से देखना कवि को समझने के लिहाज से तो उपयोगी होगा ही, अपने आप में शिक्षाप्रद भी होगा। विजयदेव नारायण साही के चर्चित निबंध शमशेर की काव्यानुभूति की बनावट में भी कवि के विवेक और सौंदर्य–बोध के दरम्यान एक ऐसी खाई देखी गई है, जिसे यह नहीं पाट सका है।

साही ने मार्क्सवाद लेकर शमशेर के अंदर चलने वाली कशमकश के क्रमिक विकास को कुछ इस तरह देखा है दृ दूसरा सप्तक के वक्तव्य में शमशेर समाज–सत्य को आग्रहपूर्वक मार्क्सवाद का पर्याय घोषित करना जरूरी समझते हैं। 1961 तक जो चीज मार्क्सवाद थी, यह समाज, सत्य का मर्म हो गई। बेशक इन दस वर्षों में परिवर्तन हुआ है, कम से कम आग्रह का। कम से कम शमशेर के लिए एक लाभ इसमें अवश्य दिखता है कि अपनी भावनाओं में, अपनी प्रेरणाओं में, अपने संस्कारों में, समाज– सत्य के मर्म को ढालना और उसमें अपने को पाना उतना कठिन नहीं है जितना वह जिसे वे मार्क्सवाद के नाम से अभिहित करते

हैं। दूसरे शब्दों में, शमशेर धीरे–धीरे मार्क्सवाद के बंद दायरे से बाहर निकलते हैं, उससे मुक्ति प्राप्त करते हैं। लेकिन इस मुक्ति के बाद भी वे समाज–सत्य के मर्म को अपनी प्रेरणाओं में ढालना चाहते हैं।

शमशेर ने मार्क्सवाद को केंचुल की तरह उतार दिया है, यहाँ 1991–92 में खुद शमशेर जोरों से मार्क्सवाद को अपनी सच्ची जरूरत बता रहे हैं। सिर्फ अपने लिए ही नहीं, रचना–कर्म मात्र के लिए मार्क्सवाद की क्या अहमियत है दृ एक इंटरव्यू में उसके बारे में वे कहते हैं, एक लेखक के रूप में मार्क्सवादी होना जरूरी है, इस तथ्य को मैं व्यावहारिक रूप में मानता हूँ। यानी मात्र सैद्धांतिक स्तर पर नहीं, व्यावहारिक स्तर पर, रचना–कर्म के ठोस धरातल पर मार्क्सवाद की अनिवार्यता उनकी निगाह में बनी हुई है। लेकिन यह मार्क्सवाद, जो शमशेर का लिविंग प्रिंसिपल है, वह उनके प्रगतिशील मित्रों के मार्क्सवाद से थोड़ा (!) भिन्न है। यह भिन्नता इसलिए है कि उन्होने मार्क्सवाद को विचारधारा मात्र के रूप में ग्रहण नहीं किया, बल्कि वह उसे मानव के गहनतम चिंतनों से जुड़ा हुआ मानकर चलते रहे।

शमशेर कहते हैं दृ मार्क्सवाद के मूल में व्यक्ति की जो सकारात्मक आजादी का पक्ष छिपा है, उसे ठीक से समझे बिना मनुष्य की बराबरी के समाज की कल्पना नहीं की जा सकती। पिछले कुछ सालों में दुनिया भर में हुई तब्दीलियों को ध्यान में रखें, तो यह कथन बहुत सार्थक हो जाता है। व्यक्ति की सकारात्मक आजादी से क्या मतलब है? पूँजीवादी समाज में यह किस तरह गुम हो जाती है? आदमी के महसूस करने की ताकत यदि कुंद कर दी जाए तो वह कई तरफ से गुलाम हो जाता है। पूँजीवादी समाज में पूरा समाज ही उपयोगितावाद का कैदी होता है

शमशेर बहादुर सिंह को प्रगतिवादियों ने प्रतिपक्षी तो नहीं समझा, लेकिन अपने से भिन्न प्रकार के मनोविज्ञान को अभिव्यक्त करने वाली उनकी रचनाओं को बर्दाश्त करने में उन्हें खासी तकलीफ होती रही। अपने जीवन में मार्क्सवादी मूल्यों को स्वीकार करके चलने वाले रचनाकारों में सबसे अधिक संघर्ष मुक्तिबोध और शमशेर को ही करना पड़ा क्योंकि इनका ढंग बिल्कुल निराला था। इन दोनों को दुश्मन नहीं, लेकिन दुश्मन को मदद पहुँचाने वालों रूप में सशंकित भाव से देखा जाता रहा।

शमशेर बहादुर सिंह को समझने और पसंद कर पाने के लिए कविता पढ़ने की कुछ वैसी आदत विकसित करने की जरूरत है जिसके अभाव का अफसोस दूसरा सप्तक के ही कवि रघुवीर सहाय की इन पंक्तियों में है।

मेरी कविता में ऊषा के

भीतर मेरी मृत्यु लिखी

चिड़िया के भीतर है मेरी

राष्ट्रभावना, बच्चों में दुख।

माना सब कुछ गबड़ सबड़ है

पर मैंने यों ही देखा था

कवि ने जिस तरह चीजों को देखा था, लोग उस तरह उसकी कविताओं को पढ़ते नहीं, पढ़े तो ध उसमें कुछ चटपटा नहीं रह ध जाता, बच बचता विषाद है। शमशेर बहादुर सिंह के लिविंग प्रिंसिपल की पहचान उनके मार्क्सवादी नजरिए को समझे बिना संभव नहीं। ऐसा नहीं था कि कवि–जीवन की शुरूआत से ही वे मार्क्सवादी थे।

सौंदर्यवाद और रीतिवाद में गहरा रिश्ता है। शमशेर के बारे में एक धारणा–सी प्रचलित हो गई है कि उन पर उर्दू की रीतिवादी कविता का गहरा असर था। डॉ..रामविलास शर्मा उनमें रूमानियत और रीतिवाद का संगम देखते हैं। रूप, रस, गंध के प्रति उनकी गहरी संवेदनशीलता को मोह की संज्ञा देते हैं और बताते हैं कि हालांकि शमशेर ने पंत और निराला को विशेष रूप से पढ़ा, लेकिन इनका प्रभाव उनके रीतिवादी संस्कारों को निर्मूल नहीं कर सका।

शब्दों के माधुर्य, पूर्ण प्रकारात्मक न्यास तथा सुरुचिपूर्णता के प्रति उनके आग्रह को उर्दू गजलियत से जोड़ते हुए इसे भी उनके रीतिवादी रुझान का सबूत माना गया है। किस तरह आखिर मैं हिंदी में आया शीर्षक निबंध में शमशेर लिखते हैं दृ गजल मेरी भावुकता और आंतरिक अभावों की, अपने तौर पर भली–बुरी एक मौन साथी थी।

शमशेर के लिए गजल क्या है, यह बताने के लिए डॉ..रामविलास शर्मा ने उन्हें ही उद्धृत किया है, किसी अकेले खामोश गुल के बिखरते हुए रंग में विभोर होकर जीवन–सुख की बहार और खिजां के दर्द से परिपूर्ण हो उठना बस यही संकेत तो गजल का एक शेर है। यह जानना जरूरी है कि डॉ..शर्मा ने वाक्य अधूरा उद्धृत किया है। यह वाक्य शुरू इस प्रकार होता है, एक संकेत में समाज और मानध–हृदय और उसके अनंत की बातें कह–सा जाना, और उसमें कभी–कभी बीसवीं का भ्रम खोजने लगना, अपना इन सबसे दिल हटाकरॉ ।

इन पंक्तियों के बाद वाक्य का वह हिस्सा शुरू होता है, जिसका इस्तेमाल शमशेर की रुमानियत को सिद्ध करने के लिए डॉ..शर्मा ने किया है। कहने की जरूरत नहीं कि जब वाक्य को पूरेपन में एक–साथ पढ़ा जाता है, तो शमशेर के लिए गजल क्या है, यह ज्यादा सही ढंग से स्पष्ट हो जाता है। कवि की निगाह में शायरी की खूबी यह है .कुछ समझ–बूझकर बहकाना और बहक जाना दृ यही तो शायरी है। इसमें बहकाने और बहक जाने को गुण बताना जितना अर्थपूर्ण है, उतना ही उसके आगे समझ– बूझकर लगाना सार्थक है।

उर्दू कविता, जिसने शमशेर के संस्कारों को ढाला है, एक रूपक में उनके सामने आती है, मर्माहता विषाद–नगरी दिल्ली की भोली–बालिका.स्वर कुछ बचपन से ही करुण..पर आज उसका यौवन–स्वर बहुत गंभीर बहुत कोमल तथा मधुर दृ किंतु बहुत गंभीर हो गया है। उनके सामने उर्दू कविता का पूरा विकास है। वे उसकी उस विशिष्टता से परिचित हैं, जिसके चलते वह महत्वपूर्ण है। उर्दू कविता नामक लेख में इस विकासक्रम की छानबीन करते हुए वे आधुनिक उर्दू कविता के बारे में यह विचार व्यक्त करते हैं, युग–परिवर्तन के साथ–साथ सुसंस्कृत होकर गजल में आज प्रत्येक विषय का समावेश हो गया है, किंतु है यह पूर्व–परिचित शृंगारिक लक्षण के आधार पर ही, चाहे वह नाम–मात्र को ही क्यों न हो, तथापि उसका संकेत– व्यापार उतना गूढ हो गया है और अनुभूतियाँ ऐसी सूक्ष्माभिव्यक्ति ढूँढती जान पड़ती हैं कि प्रत्येक विशिष्ट कवि एक प्रकार के आध्यात्मिक रंग में रंग गया–सा दिखाई पड़ता है।

शमशेर की निगाह में गजल की परंपरा का महत्वपूर्ण पक्ष है दृ शब्द–संगठन और लोच, मुहावराबंदी और सफाई का महत्व बढ़ाकर क्लिष्टता से खुद को बचाना। दूसरी चीज, जो उन्हें खींचती है, वह है इसकी शुद्धता और सुडौलपन और इसकी वह शोखी, जिसका कहीं कोई जवाब नहीं। डॉ.. शर्मा का यह विचार है कि हिंदी में तो छायावादी काव्य ने रीतिवादी परंपरा को छिन्न–भिन्न कर दिया, लेकिन चूंकि उर्दू में रीतिवादी काव्य की जड़ें गहरी थी, इसलिए वहाँ इतना व्यापक परिवतर्न नहीं हुआ। बीसवीं सदी में उर्दू गद्य और शायरी के विकास को जिसने भी ध्यान से समझा है, वह 1937 या 1938 में शमशेर द्वारा लिखे गए निबंध की इस बात से सहमत होगा कि हालांकि उर्दू कविता की पिछली शताब्दी का पूर्वार्द्ध रीतिकाल ही था, पर बाद की उर्दू कविता के भाव–संसार की सीमा गुल, बुलबुल, शमा, परवाना आदि शब्दों के खूटों से स्थिर करना इनके गूढ़ अर्थ–संकेतों की व्यापकता को समझने से इन्कार करना है। उर्दू भाषा और उर्दू कविता से शमशेर के संबंध पर कुछ विस्तार से विचार करने का कारण यह है कि उनके कवि–संस्कार के निर्माण में इनका काफी योगदान है। शमशेर को उर्दू कविता किन वजहों से अपनी ओर खींचती है दृ यह जानना उचित ही होगा।

शमशेर पर उर्दू कविता इस कारण से असर डालती है कि उसमें कला अनुप्राणित करने वाला मनुष्य का निजत्व स्वाभाविक रूप से मिलता है, विनष्ट अथवा अप्राप्य सुख के ध्यान की विह्वलता मिलती है, तो आनंद की शांति और मोक्ष के लिए उन्मन मनुष्य की शक्तियों की कार्य संलग्नता और गति का व्यक्त राग भी यहाँ सुनाई पड़ता है। उन्हें गालिब अपनी व्यापकता के केंद्र में एक बड़ा हीरो नजर आता है तो इसलिए कि वह हर बात में अपने व्यक्तित्व को सामने रखता है। उन्हें गालिब को पढ़ते हुए यह देखकर हैरानी होती है कि उसमें आज के आधुनिक साहित्यकार की–सी पूरी तड़प और वेदना के बीच एक तटस्थ यथार्थवादी दृष्टि है। गालिब की दूसरी विशेषता, शमशेर के लिए, यह थी कि उनकी दिलचस्पी किसी प्रकार के आदर्शवाद में नहीं थी थी तो केवल इंसान में। उसके विडम्बनापूर्ण मगर हौसलेमंद जीवंत नाटक में। शमशेर ने अपने इस तरह के निबंधों में जो शेर उद्धृत किए हैं, उनसे उनकी पसंद और मोह का पता चलता है। वे उर्दू कविता के असर में थे तो इसलिए कि वह इंसान के विडम्बनापूर्ण मगर हौसलेमद जीवंत नाटक की सूक्ष्माभिव्यक्ति थी, उसके रीतिवादी सौंदर्यवाद के चलते नहीं। उर्दू कविता से शमशेर के घनिष्ठ संबंध और पाश्चात्य काव्य के प्रति उनके गहरे आकर्षण ने आलोचकों को प्रेरित किया है कि वे इनके बारे में अपनी बनी–बनाई धारणाओं के आधार पर शमशेर की काव्य–दृष्टि की परिभाषा करें। एक तरफ डॉ..रामविलास शर्मा उन पर आरोप लगाते हैं कि निराला से प्रभावित होने के बावजूद उनका मन पश्चिम के हासभान कवियों से बंधा हो तो दूसरी तरफ विजयदेव नारायण साही और मलयज जैसे विचारक उनके कुछ पश्चिमी कवियों का आदरपूर्ण उल्लेख देखकर उन्हें मलार्मीय विडम्बना की कविता आदि कहकर अत्यंत ही मुग्च हो उठते हैं।

कला से मिलने वाली शांति समाज और प्रकृति के साथ व्यक्ति के रिश्तों की सही समझदारी में है। यह इस बात से साफ होता है कि शमशेर के अनुसार आत्म–सत्य का अन्वेषण सच्चा कलाकार अपनी अनुभूतियों में नहीं, उनके मूलों में करता है, उन मूलों में जो उसके समाज और संस्कृति की परंपरा में बहुत गहरे चले गए हैं। इस तरह, कलाकार के आत्म–सत्य के बाहर वह समाज–सत्य नहीं है, जिसके मर्म को अपने आंतरिक संस्कारों ढालने को दे कवि का काम समझते हैं। समाज–सत्य, कलाकार के आत्म–सत्य और कलात्मक सत्य में गहराई से धंसे मूलों में आत्म– सत्य का अन्वेषण करके समाज–सत्य के मर्म को उद्घाटित करता है, उसी का धंधा है वस्तु और शिल्प के प्रयोग के द्वारा कलात्मक सत्य के यथार्थ को प्राप्त करना।

शमशेर के लिए यह दर्पण बड़ा महत्वपूर्ण है, लेकिन उनके यहाँ यह कभी भी स्थिर किसी चौखटे में बंद नहीं मिला, हमेशा गति से भरा हुआ दिखलाई पड़ता है। इसी प्रकार, कला जिस यथार्थ को प्रस्तुत करती

है, वह भी एक संश्लिष्ट अवधारणा है। शमशेर के लिए थार्थ वह सब कुछ है जो मनुष्य के जीवन में घटित और अनुभूत होता है। मनुष्य के स्वप्न, योजनाएँ, उसके समस्त कार्यकलाप, संघर्ष, आंदोलन, क्रांतियाँ, उसका सारा व्यक्तिगत और सामूहिक इतिहास..यथार्थ है। मनुष्य की कल्पनाएँ भी उसके मानसिक जीवन का यथार्थ है। कविता इस संपूर्ण यथार्थ को व्यक्त करने का दायित्व लेकर चलती है।

निष्कर्ष

शमशेर यह समझते थे कि कला का क्षेत्र अपने–आप में अलग जरूर है और यह मूलतः वस्तु और शिल्प के प्रयोग का क्षेत्र है। वे इस बात को भी अच्छी तरह समझते थे कि कलाकार जिस चीज को व्यक्त करना चाहता हैं, वह जाहिरी रूप–रेखा नहीं है बल्कि वह कलात्मक रूप है जो कलाकार स्वयं अपने पर्दे में महसूस करता है। इसलिए रूप और शिल्प और शैली या टेकनीक का अभ्यास कलाकार के लिए आवश्यक ही नहीं होता, वह ते उसकी प्राथमिकता बन जाता है। नहीं तो वह किसी समाजशास्त्री, वैज्ञानिक, राजनीतिक चिंतक से अलग किस रूप में है? बचपन से ही अंग्रेजी, उर्दू, बंगला, हिंदी आदि के माध्यम से बिल्कुल अलग–अलग शिल्प या शैली और टेकनीक का प्रयोग करने वाले कवियों ने शमशेर को इसी वजह से प्रभावित किया कि उनमें उन्हें वे नियम मिलते थे, जिनका विकास इन कवियों ने अपनी कलात्मक अनुभूतियों को व्यक्त करने के लिए खुद किया था। इस तरह उनकी सफलता–असफलता और उनके प्रयोगों की सार्थकता की परीक्षा करते हुए शमशेर स्वयं अपनी कलात्मक अभिव्यक्ति के लिए प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे थे क्योंकि कला जितना प्रतिभा का मामला है. कहीं उससे ज्यादा अभ्यास या मश्क का भी है।

संदर्भ

1. चिंतामणि, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम लोकभारती, 2002
2. पाश्चात्य काव्यशास्त्र इतिहास, सिद्धान्त, और वाद, डॉ.. भागीरथ मिश्र, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सप्तम, 2004
3. भारतीय व पाश्चात्य काव्यशास्त्र तथा हिंदी आलोचना, डॉ.. रामचंद्र तिवारी, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, (पूर्णतया परिवर्धित) तृतीय, 2012
4. चेतना के सीमांत, ज्वाला प्रसाद खेतान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम, 2005
5. अज्ञेय शिखर अनुभूतियां, ज्वाला प्रसाद खेतान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, प्रथम, १९९९

6. आधुनिकतावाद, दुर्गा प्रसाद गुप्ता, आकाश दीप प्रकाशन, नई दिल्ली, 1963

7. नया काव्य नए मूल्य, ललित शुक्ल, स्टैंडर्ड पब्लिशर्स (इंडिया), प्रथम १९९९

8. अस्तित्ववाद और साहित्य, श्याम सुंदर मिश्र, पंचशील प्रकाशन, जयपुर, प्रथम, १९८0

9- अस्तित्ववाद और मानववाद, ज्यां पल सार्त्र (अनुवादक– ज्वरीमल्ल पारख), प्रकाशन संस्थान, नई दिल्ली, प्रथम, हिन्दी संस्करण – १९९७ १८– बिंबवाद, बिम्ब और आधुनिक कविता, डॉ.. भगवान तिवारी, अरविंद प्रकाशन मुंबई, प्रथम, १९९1